

हम पाप क्यों करते हैं?

हम सभी जानते हैं कि पाप हमें खुदा से दूर कर देता है और पाप का वेतन मृत्यु है, जैसा कि **रोमियों 6:23** में लिखा गया है:

"क्योंकि पाप की मजदूरी मृत्यु है, परन्तु परमेश्वर का वरदान हमारे प्रभु यीशु मसीह में अनन्त जीवन है।"

लेकिन इसके बावजूद भी हम पाप क्यों करते हैं? हम इसलिए पाप करते हैं क्योंकि हमने स्वयं को पाप के हाथों बेच दिया है, जैसा कि **रोमियों 7:14** में लिखा गया है:

"हम जानते हैं कि व्यवस्था तो आत्मिक है, परन्तु मैं शारीरिक और पाप के हाथों बिका हुआ हूँ।"

परन्तु हम ऐसा क्यों करते हैं? कोई व्यक्ति स्वयं को पाप के हाथों क्यों बेचेगा? इसका कारण यह है कि वह व्यक्ति स्वयं को जीवित मानता है और इस सच्चाई को स्वीकार नहीं करता कि वह मसीह के साथ क्रूस पर मर चुका है, जैसा कि **गलातियों 2:20** में लिखा गया है:

"मैं मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया हूँ, अब मैं जीवित न रहा, परन्तु मसीह मुझ में जीवित है। और जो जीवन मैं अब शरीर में जीता हूँ, उसे मैं परमेश्वर के पुत्र पर विश्वास करने के द्वारा जीता हूँ, जिसने मुझसे प्रेम किया और मेरे लिए अपने आप को दे दिया।"

इसी कारण से मनुष्य का स्वार्थ उसे पाप करने के लिए प्रेरित करता है। जबकि हमें ऐसा नहीं करना चाहिए, क्योंकि इसी पाप के कारण हम मरे हुए थे, परन्तु उसने हमें जिलाया है, जैसा कि **इफिसियों 2:1** में लिखा गया है:

"उसने तुम्हें भी जिलाया, जो अपने अपराधों और पापों के कारण मरे हुए थे।"

यह पुनरुत्थान हमारे लिए मसीह के द्वारा संभव हुआ है। इसलिए यह आवश्यक है कि हमारा यह नया जीवन **मसीह के नाम** के लिए हो, न कि पाप के लिए, जो इस संसार से आता है।

"जो कोई मसीह में है, वह नई सृष्टि है। पुरानी बातें बीत गई, देखो, सब कुछ नया हो गया।" – 2 कुरिन्थियों 5:17

हमें अपने जीवन को परमेश्वर के लिए अर्पित करना चाहिए और पाप की ओर लौटने से बचना चाहिए।

परमेश्वर के लिए स्वयं को बलिदान करना

इसलिए यह आवश्यक है कि हम अपने आप को परमेश्वर के लिए बलिदान कर दें, और वह भी उसी प्रकार, जैसा कि उसे भाता है, क्योंकि **रोमियों 12:1** में लिखा गया है:

"इसलिए, हे भाइयों, मैं परमेश्वर की दया के कारण तुमसे बिनती करता हूँ कि अपने शरीरों को जीवित, पवित्र और परमेश्वर को भानेवाला बलिदान करके अर्पण करो; यही तुम्हारी आत्मिक सेवा है।"

लेकिन हम परमेश्वर की इच्छा के अनुसार न चलकर, मनुष्यों द्वारा बनाई गई परंपराओं को मान लेते हैं, जैसा कि **कुलुस्सियों 2:8** में लिखा है:

"चौकस रहो कि कोई तुम्हें दर्शन और व्यर्थ धोखे के द्वारा, जो मनुष्यों की परम्परा और संसार की आदि शिक्षा के अनुसार है, और मसीह के अनुसार नहीं, लूट न ले।"

संस्कारों और परंपराओं में संतुलन रखना

हममें से बहुत से लोग यह सोचते हैं कि यदि हम संसार में हैं, तो हमें संसार के रीति-रिवाजों को मानना ही पड़ेगा। लेकिन कैसे इन रीति-रिवाजों का पालन करें ताकि हम परमेश्वर से दूर न हो जाएँ? यह भी आवश्यक है कि संसार के संबंधों को निभाते-निभाते हमारा व्यक्तिगत रिश्ता मसीह से कमजोर न हो।

1 कुरिन्थियों 7:26-35 में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि हमें इस संसार और परमेश्वर के बीच संतुलन बनाना चाहिए।

“26 मेरी समझ में यह अच्छा है कि आजकल क्लेश के कारण, मनुष्य जैसा है वैसा ही रहे। 27 यदि तेरे पत्नी है, तो उससे अलग होने का यत्न न कर; और यदि तेरे पत्नी नहीं, तो पत्नी की खोज न कर। 28 परन्तु यदि तू विवाह भी करे, तो पाप नहीं; और यदि कुँवारी ब्याही जाए तो कोई पाप नहीं। परन्तु ऐसों को शारीरिक दुःख होगा, और मैं बचाना चाहता हूँ। 29 हे भाइयो, मैं यह कहता हूँ कि समय कम किया गया है, इसलिये चाहिए कि जिन के पत्नी हों, वे ऐसे हों मानो उन के पत्नी नहीं; 30 और रोनेवाले ऐसे हों, मानो रोते नहीं; और आनन्द करनेवाले ऐसे हों, मानो आनन्द नहीं करते; और मोल लेनेवाले ऐसे हों, मानो उनके पास कुछ है ही नहीं। 31 और इस संसार के साथ व्यवहार करनेवाले ऐसे हों, कि संसार ही के न हो लें; क्योंकि इस संसार की रीति और व्यवहार बदलते जाते हैं। 32 अतः मैं यह चाहता हूँ कि तुम्हें चिन्ता न हो। अविवाहित पुरुष प्रभु की बातों की चिन्ता में रहता है कि प्रभु को कैसे प्रसन्न रखे। 33 परन्तु विवाहित मनुष्य संसार की बातों की चिन्ता में रहता है कि अपनी पत्नी को किस रीति से प्रसन्न रखे। 34 विवाहिता और अविवाहिता में भी भेद है : अविवाहिता प्रभु की चिन्ता में रहती है कि वह देह और आत्मा दोनों में पवित्र हो, परन्तु विवाहिता संसार की चिन्ता में रहती है कि अपने पति को प्रसन्न रखे। 35 मैं यह बात तुम्हारे ही लाभ के लिये कहता हूँ, न कि तुम्हें फँसाने के लिये, वरन् इसलिये कि जैसा शोभा देता है वैसा ही किया जाए, कि तुम एक चित्त होकर प्रभु की सेवा में लगे रहो।”

इसलिए यह आवश्यक है कि हमारा ध्यान संसार में ही लगा न रह जाए। बल्कि जो कुछ हमारे पास है, उसे हम ऐसा मानें मानो वह हमारे पास है ही नहीं।

क्योंकि यदि हम संसार के जीवन में ही डूबे रहेंगे, तो हम नए सिरे से शुरुआत नहीं कर सकते, जबकि परमेश्वर के राज्य को देखने के लिए नया जन्म लेना अनिवार्य है, जैसा कि यूहन्ना 3:3 में लिखा गया है:

"यीशु ने उत्तर दिया, 'मैं तुम से सच-सच कहता हूँ, जब तक कोई नए सिरे से जन्म न ले, वह परमेश्वर के राज्य को देख नहीं सकता।'"

और एक बार जब हमारी नई शुरुआत हो जाती है, तो वह अविनाशी होती है, जैसा कि 1 पतरस 1:23 में लिखा है:

"क्योंकि तुम नाशमान बीज से नहीं, परन्तु अविनाशी बीज से, अर्थात् परमेश्वर के जीवते और सदा ठहरनेवाले वचन के द्वारा नए सिरे से उत्पन्न हुए हो।"

परमेश्वर का वचन अविनाशी है

परमेश्वर स्वयं कहता है कि सभी चीजें नष्ट हो सकती हैं, लेकिन उसका वचन कभी नष्ट नहीं होगा, जैसा कि मत्ती 24:35 में लिखा है:

"आकाश और पृथ्वी टल जाएँगे, परन्तु मेरी बातें कभी न टलेंगी।"

इसलिए जो भी इस व्यवस्था से पुनरुत्थित हुआ है, वह पूरी तरह से नया है, जैसा कि 2 कुरिन्थियों 5:17 में लिखा है:

"इसलिए यदि कोई मसीह में है, तो वह नई सृष्टि है: पुरानी बातें बीत गई, देखो, सब कुछ नया हो गया।"

नए मन और नए हृदय की आवश्यकता

और जब हम पूरी तरह से नए हो गए हैं, तो हमारा मन भी नए तरीके से काम करना चाहिए। उसे पुराने रीति से संसार की चीजों में न उलझना चाहिए।

क्योंकि खुदा हमें नया मन और नया हृदय देता है, ताकि हम उसकी इच्छाओं को जान और समझ सकें, जैसा कि यहजकेल 36:26 में लिखा है:

"और मैं तुम को नया मन दूँगा, और तुम्हारे भीतर नई आत्मा उत्पन्न करूँगा; और मैं तुम्हारे शरीर में से पत्थर का हृदय निकाल डालूँगा, और तुम को मांस का हृदय दूँगा।"

इसलिए हमें अपने पुराने जीवन को छोड़कर परमेश्वर के नए जीवन में चलना चाहिए, ताकि हम उसकी पूर्ण इच्छा को समझकर उसके मार्ग पर चल सकें।

परमेश्वर को भाने वाली उपासना

जब हमें परमेश्वर की ओर से नया मन और नया हृदय मिला है, तो यह आवश्यक है कि हम उसकी उपासना वैसे करें, जैसा उसे भाता है, न कि मनुष्यों द्वारा सिखाई गई परंपराओं को दोहराएँ। क्योंकि मनुष्य अपने मन की शिक्षा देता है, और यह हमें मत्ती 15:9 में देखने को मिलता है:

"परन्तु व्यर्थ मुझ को पूजते हैं, क्योंकि वे उन उपदेशों को सिखाते हैं जो मनुष्यों की आज्ञाएँ हैं।"

इसलिए यह आवश्यक है कि हम संसार की आदि शिक्षा में न फँसे, क्योंकि हम तो इस संसार के लिए पहले ही मर चुके हैं, जैसा कि कुलुस्सियों 2:20 में लिखा गया है:

"यदि तुम मसीह के साथ मर गए हो, और संसार की आदि शिक्षाओं से स्वतंत्र हो, तो फिर क्यों ऐसे जीते हो मानो संसार के अधीन हो?"

स्वर्गीय वस्तुओं पर ध्यान केंद्रित करना

इसीलिए हमें संसार की वस्तुओं पर नहीं, बल्कि स्वर्गीय वस्तुओं पर मन लगाना चाहिए और हमेशा उनकी खोज में रहना चाहिए, क्योंकि हम संसार के लिए मर चुके हैं, परंतु मसीह के साथ पुनरुत्थान पा चुके हैं, जैसा कि कुलुस्सियों 3:1 में लिखा गया है:

"यदि तुम मसीह के साथ जी उठे हो, तो उन वस्तुओं की खोज करो जो ऊपर हैं, जहाँ मसीह परमेश्वर के दाहिने बैठा है।"

सच्चे प्रयास और परमेश्वर का राज्य

परमेश्वर के मार्ग पर चलने वाले बहुत कम लोग होंगे, क्योंकि यह मार्ग कठिन है, जैसा कि लूका 13:24 में लिखा गया है:

"संकट के द्वार से प्रवेश करने का यत्न करो, क्योंकि मैं तुम से कहता हूँ कि बहुत से लोग प्रवेश करना चाहेंगे, परन्तु न कर सकेंगे।"

हममें से कई लोग कहेंगे कि हमने अपना सब कुछ दाँव पर लगा दिया प्रभु के राज्य के लिए, परंतु यह केवल एक दिखावा होगा, क्योंकि हमने अपने आत्मिक जीवन को कम महत्व दिया है और सांसारिक जीवन को अधिक महत्व दिया है। इसी कारण से हमारा व्यक्तिगत रिश्ता मसीह से कमजोर हो गया है।

इसलिए हमें यह दावा नहीं करना चाहिए कि हमने पूरी कोशिश की है, क्योंकि इब्रानियों 12:4 में लिखा गया है:

"तुमने पाप से लड़ते हुए अभी तक अपना लहू बहाकर विरोध नहीं किया है।"

मसीह की छवि को प्रतिबिंबित करना

परंतु खुदा के अनुग्रह से कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो उसकी आज्ञाओं के अनुसार चलते हैं, और उनमें प्रभु की छवि दिखाई देती है। यही प्रभु की भी इच्छा है, जैसा कि **1 पतरस 1:15-16** में लिखा गया है:

"परन्तु जैसे तुम्हारा बुलानेवाला पवित्र है, वैसे ही तुम भी अपने सारे चाल-चलन में पवित्र बनो। क्योंकि लिखा है, 'पवित्र बनो, क्योंकि मैं पवित्र हूँ।'"

परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने का मार्ग

यही एकमात्र मार्ग है जिससे हम प्रभु की इच्छा को पूर्ण कर सकते हैं। उनकी इच्छा है कि हम उनकी तरह पवित्र बनें, ताकि हम उनकी छवि को प्रतिबिंबित कर सकें।

इस पवित्रता के कारण हमें शैतान समेत इस पृथ्वी पर पूर्ण रूप से राज्य करने का अधिकार प्राप्त होगा, और जब सम्पूर्ण संसार पवित्र होगा, तब शैतान के लिए इस धरती पर कोई स्थान नहीं रहेगा। तब उसे नर्क में डाल दिया जाएगा और हमारी पृथ्वी ही स्वर्ग बन जाएगी। यही हमारे प्रभु की इच्छा है।

स्वयं का मरण और प्रभु की योजना को पूर्ण करना

यह सब तभी संभव होगा जब हम इस सच्चाई को पूरी तरह स्वीकार कर लें कि हमारा 'स्वयं' मर चुका है, और इसके बाद प्रभु की इच्छा पूरी करने के पूरे मार्ग को अंत तक चलें।

यदि हम ऐसा नहीं करेंगे, तो पाप का यह चक्र यूँ ही चलता रहेगा। परंतु प्रभु के अनुग्रह और हमारी सच्ची निष्ठा से प्रभु की सभी इच्छाएँ पूर्ण हो सकती हैं और अवश्य पूरी होंगी।

आमीन!

Summary of the Commentary

Sin separates us from God, as stated in **Romans 6:23**, yet we continue to sin because we have sold ourselves to sin (**Romans 7:14**). This happens because we fail to accept that we have already died with Christ on the cross (**Galatians 2:20**). However, through Christ, we have been resurrected to a new life (**Ephesians 2:1**), and this life should be dedicated to Him, not to worldly desires.

To truly live for God, we must offer ourselves as a **living sacrifice** (**Romans 12:1**) and avoid following human traditions over God's commands (**Colossians 2:8**). Since we have died to the world (**Colossians 2:20**), we should focus on **heavenly things** and seek God constantly (**Colossians 3:1**). But only a few will succeed in doing so, as the path is narrow (**Luke 13:24**).

Many claim they have given everything for God's kingdom, but often, they prioritize worldly life over spiritual growth. Therefore, we should not assume we have done enough until we have **resisted sin to the point of shedding blood** (**Hebrews 12:4**). Those who truly walk in God's ways reflect His image and holiness (**1 Peter 1:15-16**).

God's ultimate desire is for us to be **holy like Him**, so that His image is reflected in us. Through this holiness, we will gain authority over the earth, leaving no place for Satan, and transforming the earth into heaven. This will only happen when we fully accept that our **old self is dead** and commit to fulfilling God's will completely. With God's **grace and our faithfulness**, His will **shall be fulfilled**.

Amen!

A flowchart illustrating the complete commentary in a simplified manner:

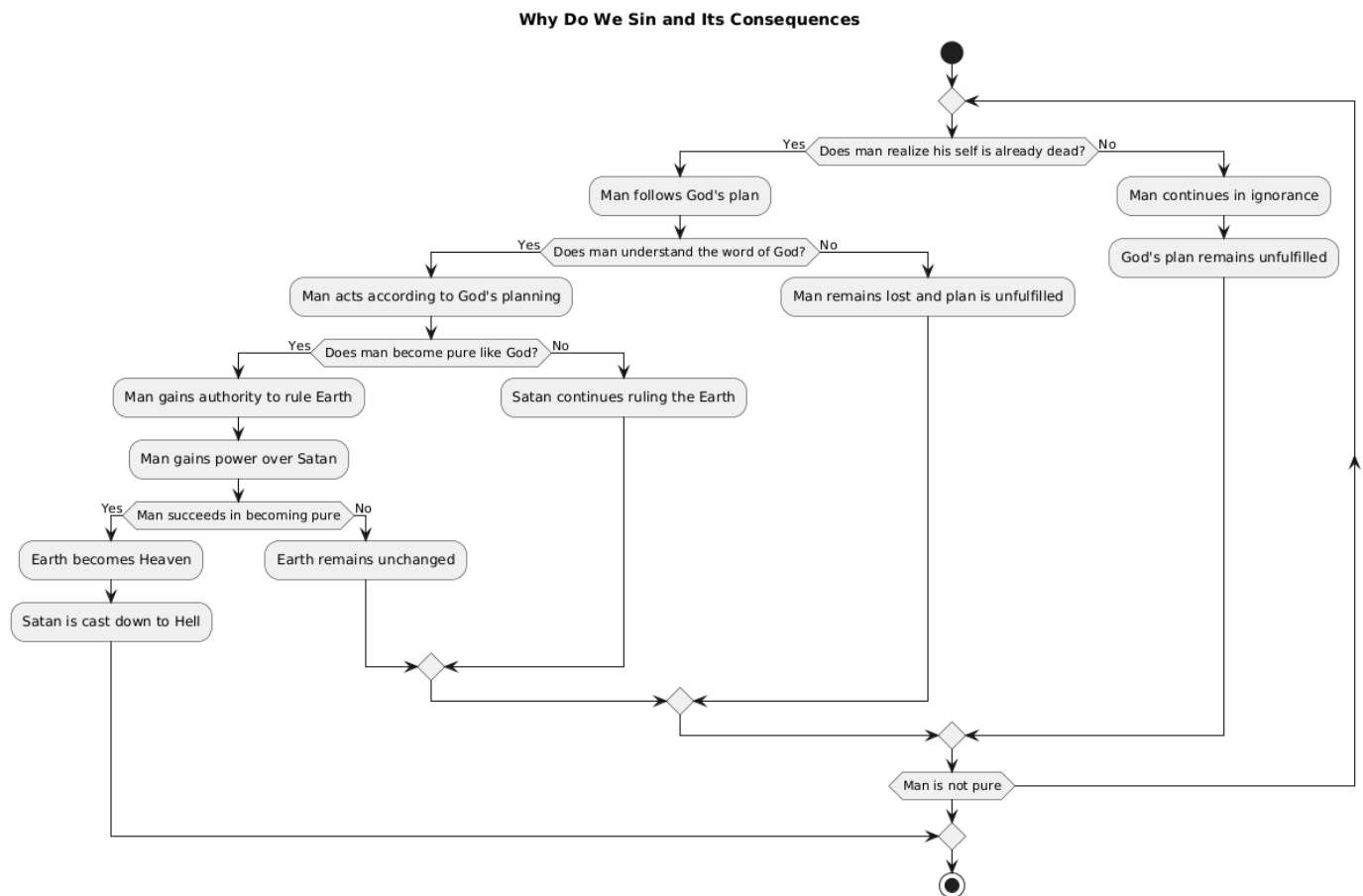


Illustration by: Sonu Kumar Saha

We sin because we do not realize that our self is already dead.

I sincerely thank Honorable Pastors, Rev. Subash Chandra Jal and Rev. Jyotish Srichua, for teaching this topic so profoundly and clearly. Their guidance has been a great blessing, enriching both my knowledge and faith. May God continue to bless them abundantly.

With gratitude,

Sonu Kumar Saha

Date: 28th February 2025